कहानी

नारंगी का छिलका

लेखक: समद बहरंगी

अनुवाद: नासिरा शर्मा

सभी चित्र उमेश गौर

शायद वह मेरा ही अपराध था जो शुक्रवार की रात शहर में रुक गया था या फिर झुग्गी वाले की पत्नी के दर्द की खता थी जो उसके पेट में उसी रात को दर्द उठना था। मेरी गलती या उसकी पत्नी की गलती साबित कर देना इतना आसान भी न था कि कोई फैसला कर लिया जाए। उचित यही है मेरे लिए कि मैं सारी घटना तुम लोगों के सामने रखूं, उसे सुनकर तुम फैसला करना आखिर खता किसकी है, मेरी या उसकी? हो सकता है कि हम दोनों ही बेगुनाह निकलें और खता किसी तीसरे की हो।

वह बृहस्पतिवार की एक दोपहर थी। मैं चाय की झुग्गी के सामने शहतूत के पेड़ के नीचे बैठा खाना खा रहा था। इरादा था शहर जाने का। इसलिए पाठशाला की छुट्टी समय से कुछ पहले कर दी थी। ताहिर भी बड़ी फुर्ती से बस्ता घर में रख तांगा लेकर लौटा था। अब पोखर के किनारे खड़े-खड़े घोड़े को पानी पिला रहा था और स्वयं अपने फूले हुए जेब से रोटी के बड़े-बड़े टुकड़े निकाल लगातार मुंह में ठूंस रहा था। उसी तेज़ी से उसका मुंह बड़े-बड़े कौर को चबाने में तेज़ी से चल रहा था। मैंने खाना समाप्त कर लिया था। मेरे सामने से जूठी थाली उठाते हुए झुग्गी वाले ने अपने बेटे को आवाज़ देकर मेरे लिए हुक्का और चाय लाने को कहा फिर मेरे समीप आकर बैठ गया। "मास्टर साहब! एक छोटी-सी विनती है।"

"हुक्म दो, नूखश मियां" मैंने कहा। इस बीच साहब अली चाय ले आया था और अब भागकर हुक्का दम करने गया था। नूखश बोला, "साहब अली की मां को जाने किस दर्द ने जकड़ लिया है कि छोड़ने का नाम ही नहीं लेता है। जिसने जो कहा वही दवा-दारू की, फूंका पानी, नज़र की शक्कर गर्ज़ की, कुछ भी न छोड़ा जो उसे पीसकर-छानकर और उबालकर न पिलाया हो, मगर दर्द है कि लगता है जान लेकर ही रहेगा। मंजूक दादी का कहना है कि इस दर्द की बस एक ही दवा है, वह है नारंगी का छिलका। कहीं से मिल जाता तो अच्छा था। मेरे पास था मास्टर साहब, मगर जाने किसे दे दिया है। अब कुछ याद भी नहीं है। आप शहर जा रहे हैं। आपसे निवेदन है थोड़ा-सा छिलका लेते आएं, बड़ी मेहरबानी होगी आपकी।" अली हुक्का ले लाया था। मेरे सामने रखकर वह बड़ी तन्मयता से हमारी बातें सुन रहा था। जब मैंने कहा, "तुम्हारा हुक्म सर-आंखों पर नूखश मियां।" सुनते ही साहब अली के चेहरे पर प्रसन्नता की ऐसी लाली दौड़ी जैसे उसने अपनी मां को भली-चंगी देख लिया हो।

० ० ० ०

शनिवार की सुबह को मैं शहर से लौटा। मेरे हाथों में नारंगी का थैला था। पुराने लोगों का ख्याल था कि इसके छिलके को उबालकर उसका पानी पीने से हर प्रकार का पेट का दर्द और विकार ठीक हो जाता है। मगर कौन-सा दर्द? बस स्टाप से गांव तक का रास्ता यदि तेज़-तेज़ पार किया जाए तो पौन घण्टा लगता है। मुझे जल्दी तो थी नहीं, आराम से टहलते हुए मैं रास्ता तय करने लगा। सीधे घर पहुंचा। क्लास में दो-तीन पुस्तकें जो ज़रूरी थीं, उठायीं और नारंगी का लिफाफा ले मैं बाहर निकल आया। अभी मैं कम्पाउण्ड में ही पहुंचा था कि मकान मालिक की आवाज़ सुनाई पड़ी, "सलाम!" फिर आहिस्ता से बोले, "खुदा सब पर रहम करे, सबको एक दिन जाना है।"

"क्या... साहब अली मातृहीन हो गया? बेचारा साहब अली!"

अब कौन उसे रोटी बांधकर पाठशाला के लिए देगा? एकाएक हाथ में पकड़ा वह नारंगी का लिफाफा भारी हो उठा, भारी पत्थर में परिवर्तित हो गया जिसे संभालना मेरे लिए कठिन हो गया।

मकान मालिक बोले, "बृहस्पतिवार की रात को, लगभग आधी रात के बाद, कल ही तो दफन किया है।"

मैं घर में दोबारा लौट आया। हाथ में पकड़ा नारंगी का लिफाफा किताबों के पीछे छुपाया, दिल न माना वहां से उठाकर लिहाफ-तोशक के नीचे छुपा दिया। मैं नहीं चाहता था कि जब मेरे घर साहब अली या नूखश मियां आएं तो उसकी निगाह भूले से भी इस पर पड़ जाए।

० ० ० ०

झुग्गी एक-दो दिन बंद रही फिर सारा काम पहले की तरह चलने लगा। मगर साहब अली अपनी पुरानी हालत में नहीं लौटा। बीस-पच्चीस दिन गुज़र गए थे मगर वह हरदम सोच में डूबा उदास बैठा रहता। हंसना-बोलना तो जैसे वह भूल ही गया था। मेरी तरफ तो उसने ध्यान देना जाने कब से बंद कर दिया था। जैसे हममें कभी जान-पहचान ही न रही हो या फिर बरसों से बोलचाल बंद हो गई हो। यहां तक कि जब मैं उसकी झुग्गी पर जाता तो बड़ी कठिनाई से वह मेरे सलाम का जवाब देता था।

नूखश मियां अपने बेटे के इस व्यवहार से पानी-पानी हो जाता। सफाई पेश करते हुए कहता "सबसे ही यूं मिलने लगा है, केवल आपसे ही नहीं। जाने इसका स्वभाव कैसा होता जा रहा है!"

मैं उत्तर देता, "बच्चा है, सब्र कम है, कुछ मास बाद सब ठीक हो जाएगा।

धीरे-धीरे ही तो दुख को भूलेगा बेचारा।"

o o o o

पत्नी के देहान्त के बाद नूखश अपनी गृहस्थी झुग्गी पर ही उठा लाया था। अब वह झुग्गी घर और दुकान दोनों थी। दोनों बाप-बेटे रात-दिन वहीं रहते थे। मैं भी कभी-कभी काफी देर तक झुग्गी पर बैठा रहता था।

काफी दिन गुज़र गए थे मगर साहब अली के स्वभाव में सुधार न हुआ। दिन-प्रतिदिन उसका व्यवहार मेरे प्रति अधिक विचित्र होने लगा था। वह पढ़ाई की तरफ बहुत कम ध्यान देता था। कक्षा में कुछ पूछने पर उसे पढ़ाया हुआ कुछ भी याद न रहता था। मगर मुझे आश्चर्य तब होता जब वह दूसरों से अब पहले की तरह मिलने लगा था, मगर मेरे प्रति उसका व्यवहार पहले जैसा ही ठण्डा और अपरिचित-सा था। मैं इस समस्या पर जितना भी सोचता, समस्या का सिरा हाथ नहीं लगता था बल्कि अधिक उलझ जाता था। आखिर मां के देहान्त के बाद वह मुझसे इतना कटा-कटा क्यों रहने लगा है? फिर सोचता कहीं साहब अली अपनी मां की मौत का ज़िम्मेदार मुझे तो नहीं समझता है? यह प्रश्न इतना बेवकूफी का लगता कि इस पर कुछ सोचना मुझे व्यर्थ-सा लगा। साहब अली की मां को ऐपेन्डिक्स का दर्द उठा था। अगर तभी उसका ऑपरेशन हो जाता तो वह बच जाती, मगर

अनजाने ही मौत के मुंह में चली गई।

०००००

एक दिन कक्षा में भूगोल पढ़ाते हुए शब्द 'नारंगी' आया। मैंने बच्चों से प्रश्न किया 'किसी ने नारंगी देखी है?'

पूरी कक्षा में खामोशी छाई रही जैसे मेरा प्रश्न उनकी समझ में न आया हो। मगर हैदरअली, मंजूक दादी के पोते, के चेहरे का रंग बदल रहा था जैसे वह बोलना चाह रहा हो मगर झिझककर रुक जाता हो। मैंने दोबारा अपना प्रश्न दोहराया, 'नारंगी के बारे में किसी को कुछ पता है?' इस बार भी वही खामोशी मगर हैदरअली के चेहरे पर वही बेचैनी जैसे वह कुछ कहना चाह रहा हो। मुंह खोलता है मगर आवाज़ नहीं निकलती है। आखिर मुझे पूछना पड़ा, "हैदरअली कुछ कहना चाह रहे हो? जो कहना है कहो, शाबाश!"

अब सबकी आंखें हैदरअली के चेहरे पर गड़ गईं सिवाय साहब अली की आँखों के जो ब्लैक-बोर्ड पर टिकी हुई थीं। जब से 'नारंगी' शब्द का ज़िक्र चला था, साहब अली का बदन अकड़ गया था और चेहरे पर एक ऐसा भाव था जैसे वह मेरी बात सुन ही नहीं रहा हो। हैदरअली ने डरते-सहमते हुए बहुत धीरे से कहा, "मास्टर साहब! मेरे पास नारंगी है।" किसी को भी हैदरअली से ऐसे उत्तर की आशा न थी सो सारी कक्षा एक साथ खिल-खिलाकर हंस पड़ी। साहब अली शान्त रहा मगर उसकी आंखों में एक तेज़ चमक पैदा हुई और उसने तेज़ी से गर्दन घुमाकर आंखें मंजूक दादी के पोते हैदरअली के चेहरे पर गड़ा दीं। सबके मन में खलबली-सी मच गई। बेचैन निगाहें जल्द-से-जल्द नारंगी को देखने के लिए इधर-उधर घूमने लगीं। क्लास का सबसे शरीर लड़का अली खड़ा हुआ और बोला, "यह झूठ बोल रहा है मास्टर साहब! अगर होता तो दिखाता न?" मैंने अली को उसकी जगह बैठने का इशारा किया फिर कहा, "वह यदि चाहेगा तो हमें ज़रूर दिखाएगा।"

सचमुच हैदरअली साइंस की किताब बस्ते से निकालकर तेज़ी से उसके पन्ने पलटने लगा था जैसे वह किसी चीज़ को ढूंढ रहा हो मगर उसे मिल नहीं रही है। साथ-ही-साथ वह लगातार बड़बड़ा भी रहा था। "मैंने रखा तो था दिल और नसों वाले चित्र के बीच में।"

मैंने किताब हैदरअली से ले ली। अब सबकी आंखें मेरे हाथों पर टिक गई थीं। यहां तक कि साहब अली की आंखें भी। सब देखना चाह रहे थे कि आखिर नारंगी कौन-सा सर्वोत्तम उपहार है। मैं इस बात से दिल-ही-दिल में प्रसन्न था कि साहब अली को

धीरे-धीरे मैं अपनी ओर खींचने में कामयाब हो गया। लेकिन यह समझ न सका कि आखिर इस आकर्षण का कारण क्या है जो साहब अली यूं मेरी ओर आकर्षित हो गया है। क्या केवल वह नारंगी का रंग और रूप देखना चाहता है?

दिल और धमनियों वाला चित्र मैंने हैदरअली की पुस्तक में निकाल लिया और वह दोनों पन्ने सबको दिखाए। पर उसमें नारंगी नहीं थी लेकिन पीले रंग के धब्बे दोनों पन्नों पर साफ नज़र आ रहे थे। सबसे पहले साहब अली अपनी बेंच से खड़ा हुआ और पुस्तक के बीच में झांकने लगा, उसे मेरे बोलने की व्याकुलता से प्रतीक्षा थी। नारंगी की सुगंध पन्नों के बीच से उठ रही थी। एकदम से एक बात मुझे याद आ गई जो उस समय तक मैं पूरी तरह से भूला हुआ था। साहब अली की मां के देहान्त के कुछ दिन बाद नारंगी को ले जाकर मैंने हैदरअली की दादी को दे दिया था ताकि गांव में फिर किसी को आवश्यकता हो तो उससे जाकर ले ले। मंजूक दादी, सफेद बालों वाली, गांव की सबसे बूढ़ी औरत थी। लोगों का विचार था मंजूक दादी हर प्रकार के रोगों का उपचार जानती है। वह दाई का काम भी करती थी।

मंजूक दादी अपने पोते हैदरअली के साथ रहती थी। इस पोते के अलावा दुनिया में उनका कोई न था। सो वह हैदर अली पर जान छिड़कती थीं। यही हाल हैदरअली का था। उसका भी दादी के सिवा आगे-पीछे कोई न था। इसलिए वह दादी से पल भर भी अलग नहीं रह सकता था। पूरे गांव के लोग हैदरअली को मंजूक दादी का पोता कहते थे। शायद ही कोई उसके नाम हैदरअली से उसे संबोधित करता था। जब मुझे याद आ गया कि मैंने नारंगी मंजूक दादी को दे दी थी, तो मैं यह तो समझ गया कि यह पीला धब्बा कहां से और किस चीज़ का है। मंजूक दादी ने उसका एक टुकड़ा पोते को दे दिया होगा और उसने उसे अपनी पुस्तक के बीच रख लिया।

मैं जब छोटा था और स्कूल जाता था उस समय नारंगी और मौसमी के छिलके को किताबों के बीच में रखता था ताकि किताब में सुगंध भर जाए। हैदरअली ने जब देखा कि किताब के बीच में कुछ नहीं है, इस तरह से उसने रोना आरम्भ कर दिया जैसे कि उसकी बहुत कीमती चीज़ खो गई हो। रोते हुए बोला, "मास्टर साहब! मेरी नारंगी किसी ने निकाल ली है।"

मैंने क्लास के एक-एक लड़के का मुख गौर से देखा, कौन हो सकता है जिसने यह हरकत की है? अली? ताहिर? साहबअली? आखिर कौन? हैदरअली को चुप कराके मैंने कहा, "अब रोना बंद करो, देखूं तो आखिर हुआ क्या है। शायद तुमने गिराया या

खो दिया हो।" हैदरअली ने कहा, "नहीं मास्टर साहब, मैंने सुबह देखा था। वह इसी किताब में था, खाने की छुट्टी में मैं घर भी नहीं गया।"

वह सच कह रहा था। ताहिर की मां के पेट में रात से दर्द उठा था। मंजूक दादी वहीं थीं। जब तक बच्चा न हो जाता वह कैसे रोगी को छोड़ सकती थीं? इस कारण हैदरअली घर न जाकर पाठशाला में ही रहा। मैंने कहा, "लड़को, तुम में से जिसने भी हैदर अली की किताब से नारंगी का छिलका निकाला है खुद बोल दो। हमको आपस में झूठ नहीं बोलना चाहिए। हम लोग तो आपस में दोस्त हैं। झूठ तो उनसे बोला जाता है जो कि हमारा दुश्मन हो और हम उस पर विश्वास न करते हों।"

साहब अली के दो आंखें, दो कान थे मगर इस समय वह इतना तन्मय हो गया था कि लग रहा था हमारी बात सुनने के लिए दो कान दो आंखें और उधार मांग ली हों।

मैंने फिर कहा, "पता नहीं चला कि तुममें से किसने नारंगी उठाई है?"

पल-भर सन्नाटा रहा। बाद में अली ने अपना हाथ ऊपर उठाया और कहा, "मास्टर साहब, मैंने निकाला था मगर अब मेरे पास नहीं है।"

मैंने पूछा, "क्या किया उसका?"

अली ने उत्तर दिया, "मैंने कहरमान को दे दिया था ताकि वह अपनी किताब को सुगंधित कर ले, मगर वह अब कहता है मेरे पास नहीं है। मैंने लौटा दिया है।"

कहरमान अपनी जगह से उठा और बोला, "मास्टर साहब! मैं सच कह रहा हूं, मेरे पास केवल आधा है।"

मैंने पूछा, "आधे का क्या हुआ?"

कहरमान बोला, "मैंने आधा ताहिर को दे दिया था।" यह कहकर कहरमान ने नारंगी के छिलके का एक छोटा-सा टुकड़ा हिसाब की किताब से निकाला और मेरी मेज़ पर रख दिया। वह छिलका सूखकर सख्त सीमेंट के टुकड़े में बदल गया था। सबकी निगाहें ताहिर पर से हटकर मेरी मेज़ पर केन्द्रित हो गई थीं। सभी चाह रहे थे उसे उठाकर देखें और सूंघें। मैंने रजिस्टर उठाकर नारंगी के टुकड़े पर रख दिया और ताहिर की तरफ मुड़ा। ताहिर मजबूर हो गया और जगह से खड़ा होकर बोला, "मास्टर साहब मेरे पास आधा है। मैंने बाकी हिस्सा दलाल-ओगली को दे दिया।

ताहिर ने भी एक छोटा-सा टुकड़ा साइंस की किताब से निकालकर दिया। इस तरह से नारंगी के छिलके का एक टुकड़ा पांच-छः बार छोटे-छोटे टुकड़ों में बांटा गया था। और आखिरी टुकड़ा छोटी उंगली के पोर-भर का रह गया था। हर टुकड़े के मिलने पर नन्हे हैदर

अली की हालत संभलती जा रही थी। मगर साहब अली बात करने या पूछने के बजाए खामोशी से नारंगी के टुकड़ों को देखकर अंत की प्रतीक्षा कर रहा था। जब सारे टुकड़े जमा हो गए तो मैंने उन्हें मुट्ठी में उठा लिया और सोचने लगा क्या करूं? मैं चाह रहा था कि पहले लड़कों को यह बताऊं कि यह स्वयं नारंगी नहीं है बल्कि उसका छिलका है, जो सूखकर इस शक्ल का हो गया है लेकिन साहब अली ने इसका अवसर नहीं दिया। एकाएक वह अपनी जगह से उठा और क्रोध में उबलता आगे बढ़ा और पूरी ताकत से मेरी मुट्ठी के नीचे घूंसा मारा। इस तरह से छिलके के सारे टुकड़े उछलकर कमरे में इधर-उधर फैल गए। कुछ लड़के टुकड़ों की तरफ लपके मगर मेरी डांट से सब अपनी-अपनी जगहों पर खामोश बैठ गए। उन्हें पता चल गया था कि मैं गुस्से में हूं और हो सकता है एक-आध को मार भी बैठूं। साहब अली अपने स्थान पर जाकर बैठ गया और डेस्क पर मुंह रखकर ऐसा बिलखकर रोया कि सबकी आंखें नम हो गईं।

००००

रात को मैं काफी देर तक झुग्गी में बैठा रहा। यहां तक कि सारे ग्राहक

एक-एक करके चले गए। बस मैं, साहब अली और नूखश मियां रह गए।

मुझे विश्वास हो गया था कि मैंने समस्या का सिरा पकड़ लिया है। यदि थोड़ा कष्ट उठाऊं तो सारी चीज़ समझ जाऊंगा। मेरा विचार था कि साहब अली की कटुता और क्रोध का कारण, हर तरह से नारंगी से जुड़ा है। कैसे और क्यों कर, यह समझ नहीं पाया था।

साहब अली बेंच पर बैठा था। किताब पर उसका सर झुका हुआ था। जैसे कि पढ़ने में व्यस्त हो परन्तु मैं समझ गया था कि वह मेरे बोलने की प्रतीक्षा कर रहा है। जब चाय की झुग्गी में सन्नाटा छा गया तो मैंने कहा, "कैसे हो साहब अली?"

साहब अली ने उत्तर न दिया। नूखश बोला, "बेटे! मास्टर साहब तुमसे कुछ पूछ रहे हैं?"

"ठीक हूं।" साहब अली ने थोड़ा-सा सिर ऊपर उठाया और कहा।

मैंने फिर कहा, "साहब अली, तुम्हारा दिल चाह रहा है कि इस बार जब मैं शहर जाऊं तो तुम्हारे लिए नारंगी ले आऊं, क्यों?"

मेरे ऐसा कहने का अर्थ केवल यह था कि इस बहाने साहब अली से बातचीत हो जाएगी। इस बीच नूखश ने फिर चाहा कि कुछ कहे मगर मैंने कह दिया कि हमारे बीच न बोले। साहब अली ने कोई उत्तर न दिया। मैंने दोबारा पूछा, "साहब अली, तुम्हें नारंगी नहीं चाहिए?"

साहब अली एकदम से गुब्बारे की तरह फट पड़ा और बोला, "अगर सच कह रहे हैं तो उस समय क्यों नहीं लाए थे जब मेरी मां मरी थी? अगर आप नारंगी तब ले आते तो क्या मेरी मां मरती कभी?"

साहब अली अपने मन का बोझ आंखों से कम कर रहा था। दोनों हाथों से मुंह छुपाए वह फूट-फूटकर रो रहा था। नूखश मियां की समझ में कुछ नहीं आ रहा था कि वह क्या करें, बेटे को दिलासा दें, मुझसे क्षमा मांगे, या उन आंसुओं को रोकें जो उनकी आंखों में तेज़ी से जमा हो रहे थे?

अब मेरे लिए ज़रूरी हो गया था कि मैं साहब अली को विश्वास दिलाऊं कि नारंगी का छिलका उसकी मां की मौत को रोक नहीं सकता था। मगर यह काम वास्तव में बहुत मुश्किल था। बहुत मुश्किल था।

समद बहरंगी (1936-1968) पेशे से शिक्षक थे। समद ने ज़्यादातर छोटे बच्चों के लिए कहानियां लिखीं। उनकी कहानियों में मज़दूर-कामगार वर्ग के, झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले बच्चे ही प्रमुख पात्र होते थे। समद ने ईरान में शिक्षा पद्धति का अध्ययन कर कई लेख भी लिखे थे। नारंगी का छिलका उस दौर की कहानी है जब ईरान का सम्पन्न वर्ग विदेशों से आयातित नारंगियों का लुत्फ उठा रहा था और दूसरी ओर गांवों के बच्चे नारंगी को नहीं पहचानते थे। बड़े शहरों में डॉक्टर थे तो गांव में डॉक्टर का नामो-निशां न था। इन सभी विसंगतियों को समद ने इस कहानी में खूब उभारा है।

पुस्तक: काली छोटी मछली, अभिव्यंजना प्रकाशन, नई दिल्ली।